**ओ३म्**

**“जो पृथिवी, पाषाण, वृक्षादि व मनुष्यों आदि की उपासना ईश्वर के स्थान पर करते हैं वे घोर नरकरूपी दुःखसागर में गिरते हैं: ईशावास्योपनिषद्”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के मन्त्र संख्या 9 से 11 तक का ऋषि दयानंदकृत भाषार्थ व भावार्थ आदि प्रस्तुत हैः

मन्त्र संख्या 9

**ऋषि दीर्घतमाः। देवता आत्मा=स्पष्टम्। छन्द अनुष्टुप्। स्वर गान्धारः।।**

**कौन मनुष्य घोर अन्धकार को प्राप्त होते हैं, यह उपदेश किया है।।**

**अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽसंभूतिमुपासते।**

**ततो भूयऽइव ते तमो य ऽ उ सम्भूत्यां रताः।।9।।**

**अन्वयः ये परमेश्वरं विहायाऽसम्भूतिमुपासते तेऽन्धन्तमः प्रविशन्ति, ये सम्भूत्यां रतास्त उ ततो भूय इव तमः प्रविशन्ति।**

**भाषार्थ**-जो लोग परमेश्वर को छोड़कर (असम्भूतिम्) अनादि, जिसकी उत्पत्ति कभी नहीं होती, सत्व, रज, तम गुण रूप (उस) प्रकृति नामक जड़ वस्तु को (उपासते) उपासनीय समझते हैं (ते) वे (अन्धम्) ढकने वाले (तमः) अन्धकार में (प्र) अच्छी तरह से (विशन्ति) प्रविष्ट होते हैं।

(ये) जो लोग (सम्भूत्याम्) महतत्वादि स्वरूप में परिणत हुई सृष्टि में (रताः) रमण करने वाले हैं, (ते) वे (उ) निस्सन्देह (ततः) उससे (भूय इव) कहीं अधिक (तमः) अविद्यारूप अन्धकार में (प्रविशन्ति) प्रविष्ट होते हैं।। 9।।

**भावार्थ**-जो लोग सकल जड़ जगत् के अनादि नित्य कारण प्रकृति को उपास्य समझते हैं, वे अविद्या को प्राप्त करके सदा दुःखी रहते हैं।

और जो उस कारण प्रकृति से उत्पन्न हुए पृथिव्यादि स्थूल, कार्य-कारण रूप सूक्ष्म अनित्य संयोग से उत्पन्न कार्य जगत् को अपना इष्ट उपास्य देव मानते हैं, वे गाढ़ अविद्या को प्राप्त करके उससे अधिक दुःखी रहते हैं। इसलिए सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा की ही सदा उपासना करें।।40/9।।

**भाष्यसार**-कौन मनुष्य घोर अन्धकार को प्राप्त होते हैं-जो मनुष्य परमेश्वर को छोड़कर असम्भूति अर्थात् अनादि, अनुत्पन्न, प्रकृति नामक सत्व, रज, तम गुणमय जड़ वस्तु को उपास्य मानते हैं, वे घोर अन्धकार को प्राप्त होते हैं अर्थात् अविद्या को प्राप्त होकर सदा दुःखी रहते हैं। और जो सम्भूति अर्थात् उस कारण प्रकृति से उत्पन्न, महदादि स्वरूप में परिणत हुई सृष्टि अर्थात् पृथिव्यादि स्थूल जगत्, कार्य-कारण रूप सूक्ष्म, अनित्य संयोगजन्य कार्य जगत् को उपास्य मानते हैं, उसमें रमण करते हैं वे उससे भी कहीं अधिक गाढ़ अविद्या अन्धकार को प्राप्त होकर दुःखी रहते हैं। अतः सब मनुष्य सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा की ही सदा उपासना करें।।40/9।।

**अन्यत्र व्याख्यात-‘अन्धन्तमः प्रविशन्ति0’-**जो असम्भूति अर्थात् अनुत्पन्न, अनादि, प्रकृति की ब्रह्म के स्थान में उपासना करते हैं, वे अन्धकार अर्थात् अज्ञान और दुःखसागर में डूबते हैं। और सम्भूति जो कारण से उत्पन्न हुए कार्यरूपी पृथिवी आदि भूत, पाषाण और वृक्षादि अवयव और मनुष्यादि के शरीर की उपासना ब्रह्म के स्थान में करते हैं, वे उस अन्धकार से भी अधिक अन्धकार अर्थात् महामूर्ख चिरकाल घोर दुःखरूप नरक में गिरके महाक्लेश भोगते हैं (सत्यार्थप्रकाश एकादश समुल्लास)।।40/9।।

मन्त्र संख्या 10

**ऋषि दीर्घतमाः। देवता आत्मा=मनुष्यः। छन्द अनुष्टुप्। स्वर गान्धारः।।**

**फिर मनुष्य क्या करें, यह उपदेश किया है।**

**अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्।**

**इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्यिचचक्षरे।।10।।**

**अन्वयः-हे मनुष्यया यथा वयं धीराणां सकाशाद्याद्वचः शुश्रुम, ये नस्तद्विचचक्षिरे, ते सम्भवादन्यदेवाहुरसम्भवादन्यदाहुरिति यूयमपिश्रृणुत।।10।।**

**भाषार्थ-**हे मनुष्यो! जैसे हमने (धीराणाम्) मेधावी, विद्वान्, योगी जनों के वचन (उपदेश) (शुश्रुम) सुनें हैं (ये) जिन्होंने (नः) हमें (तत्) उस सम्भूति और असम्भूति दोनों का विवेचन (विचचक्षिरे) व्याख्यापूर्वक समझाया है, वे योगी (सम्भवात्) संयोग से उत्पन्न कार्य से (अन्यत् एव) और ही कार्य वा फल (आहुः) बतलाते हैं तथा (असम्भवात्) उत्पन्न न होने वाले कारण से (अन्यत्) भिन्न कार्य वा फल (आहुः) बतलाते हैं। (इति) इस प्रकार तुम भी सुनो।।10।।

**भावार्थ**-हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् लोग कार्य-वस्तु और कारण-वस्तु से आगे कहे जाने वाले भिन्न-भिन्न उपकार ग्रहण करते तथा अन्यों को भी ग्रहण करवाते हैं, उन कार्य और कारण के गुणों को जानकर अन्यों को समझाते हैं, इसी प्रकार तुम भी निश्चय करो।।40/10।।

**भाष्यसार**-मनुष्य क्या करें-विद्वान् मनुष्य धीर अर्थात् मेधावी विद्वान् योगी जनों से जिन सम्भूति विषयक वचनों का श्रवण करें उनका विवेचन करके सब मनुष्यों को समझावें। सम्भव (संभूति) अर्थात् संयोग से उत्पन्न कार्य जगत् से उक्त विद्वान् अन्य फल बतलाते हैं और असम्भव (असम्भूति) अर्थात् अनुत्पन्न कारण जगत् से अन्य फल बतलाते हैं।

उक्त विद्वान् मनुष्य सम्भव (कार्यवस्तु), असम्भव (कारण वस्तु) से भिन्न-भिन्न वक्ष्यमाण उपकार ग्रहण करते और कराते हैं। कार्य वस्तु और कारण वस्तु के गुणों को स्वयं जानकर उनका उपदेश करते हैं। अतः सब मनुष्य कार्य और कारण वस्तु को जानें।।40/10।।

**मन्त्र संख्या 11**

**ऋषि दीर्घतमाः। देवता आत्मा=विद्वान्। छन्द अनुष्टुप्। स्वर गान्धारः।।**

**फिर मनुष्यों को कार्य और कारण वस्तु से क्या-क्या सिद्ध करना चाहिए, यह उपदेश किया है।।**

**सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयं सह।**

**विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते।।11।।**

**अन्वयः हे मनुष्याः! यो विद्वान् सम्भूतिं च विनाशं च सहोभयं तद्वेद, स विनाशेन सह मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्या सहामृतमश्नुते।।11।।**

**भाषार्थ**-हे मनुष्यो! (यः) जो विद्वान् (सम्भूतिम्) जिसमें पदार्थ उत्पन्न होते हैं उस कार्यरूप सृष्टि को (च) और सृष्टि के गुण-कर्म-स्वभाव को एवं (विना-शम्) जिसमें पदार्थ विनष्ट=अदृश्य हो जाते हैं उस कारणरूप प्रकृति को तथा (च) उसके गुण-कर्म-स्वभाव को (सह) एक साथ (अभयं तत्) उस कार्य कारण रूप जगत् को (वेद) जानता है, वह (विनाशेन) नित्य स्वरूप को समझने के कारण (मृत्युम्) शरीर और आत्मा के वियोग से उत्पन्न दुःख को (तीर्त्वा) पार करके (सम्भूत्या) शरीर इन्द्रिय अन्तःकरण रूप उत्पन्न होने वाली कार्य रूप, धर्म कार्य में प्रवृत्त कराने वाली सृष्टि के सहयोग से (अमृतम्) मोक्ष-सुख को (अश्नुते) प्राप्त होता है।

**भावार्थ-**हे मनुष्यो! कार्य (सृष्टि), कारण (प्रकृति) नामक वस्तुएं निरर्थक नहीं हैं, किन्तु कार्य, कारण इन दोनों के गुण, कर्म व स्वभाव को जानकर, इनका धर्मादि, मोक्ष के साधनों में उपयोग करके, अपने-अपने स्वरूप से कार्य और कारण की नित्यता के विज्ञान से मृत्यु के भय को हटा कर मोक्ष की सिद्धि करो। इस प्रकार कार्य (सृष्टि), कारण (प्रकृति) के द्वारा भिन्न-भिन्न धर्मादि और मोक्ष सिद्धि रूप फल प्राप्त करना चाहिए।

उपासना के प्रकरण में परमेश्वर के स्थान में इन कार्य (सृष्टि), कारण (प्रकृति) की उपासना करने का निषेध समझना चाहिये।

**भाष्यसार**-मनुष्य कार्य और कारण वस्तु से क्या-क्या सिद्ध करें-विद्वान् मनुष्य सम्भूति अर्थात् कार्य नामक सृष्टि और उसके गुण-कर्म-स्वभाव, विनाश (असम्भूति) अर्थात् जिसमें सब पदार्थ विनष्ट=अदृश्य हो जाते हैं उस कारण रूप प्रकृति और उसके गुण-कर्म-स्वभाव को साथ-साथ जानें। विनाश (असम्भूति) नित्य प्रकृति को जानकर मृत्यु अर्थात् शरीर के वियोग से उत्पन्न दुःख को पार करें। सम्भूति अर्थात् शरीर, इन्द्रिय और अन्तःकरण रूप उत्पन्न कार्य जगत् तथा धर्म में प्रवृत्त करने वाली सृष्टि को जानकर, इसका सदुपयोग करके मोक्ष-फल को प्राप्त करें। इस प्रकार कारण वस्तु से मृत्यु-भय का त्याग और कार्य वस्तु से मोक्ष-फल की सिद्धि रूप भिन्न-भिन्न फल की प्राप्ति करें। कारण और कार्य वस्तु का परमेश्वर के स्थान में उपासना करने का निषेध है, इनसे यथायोग्य उपयोग लेने का नहीं।।40/11।। (क्रमशः जारी)

मनुष्य जीवन का उद्देश्य वेदादि सत्य शास्त्रों के इन्हीं उपदेशों को जानकर, इनके अनुसार ईश्वर की उपासना कर तथा वेदों के ज्ञान के अनुरूप आचरण करके दुःखों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना चाहिये। यह अमृत उपदेश ईश्वर और ऋषि दयानन्द की महती कृपा से हमें सुलभ हैं। करोड़ों लोगों को यह ज्ञान उपलब्ध नहीं है। कुछ मत-मतान्तरों के आचार्य अपनी अविद्या और स्वार्थों के कारण सत्य वैदिक सिद्धान्तों को अपने अनुयायियों तक पहुंचने ही नहीं देते। अतः जिन्हें वैदिक ज्ञान सुलभ है वह इससे लाभ उठा कर अपने आचरण व उपलब्धियों से इसे सत्य व प्रमाणित कर दूसरों को भी इसका आचरण के लिए प्रेरित करें। ऐसा होने पर ही दूसरे इसे अपनाने में अग्रसर हो सकते हैं। अभी तो ऋषि दयानन्द के विद्वान और आचार्य वैदिक ज्ञान को आचरण में लाकर इससे लाभ लेने में स्वयं को ही पात्र नहीं बना पा रहे हैं। वेदों के आचरण से ही मनुष्य सच्चा मनुष्य बनता है। आज वेद की विचारधारा के विश्व भर में प्रचार की सबसे अधिक आवश्यकता है। क्या आर्यसमाज के नेता इस चुनौती को स्वीकार करेंगे? ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**ओ३म्**

**-ईशावास्योपनिषद पर ऋषि दयानन्द का व्याख्यान-**

**“चेतन ब्रह्म की उपासना और सेवा करनी चाहिए और इससे भिन्न जड़ आदि पदार्थों की उपासना नहीं किन्तु उनसे उपकार ग्रहण करना चाहिए”**

**प्रस्तुतकर्ता-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

ईशावास्योपनिषद् में कुल 17 मन्त्र हैं। इस लेख में ईशावास्योपनिषद् के मन्त्र क्र्रमांक 12 से 14 पर ऋषि दयानन्द के यजुर्वेद भाष्य से इन मंत्रों के भाषार्थ एवं भावार्थ आदि प्रस्तुत हैं:

**मन्त्र संख्या 12**

**मन्त्र के ऋषि दीर्घतमाः। देवता आत्मा=स्पष्टम्। छन्द निचृदनुष्टुप् स्वर गान्धारः।।**

**अब विद्या और अविद्या की उपासना के फल का उपदेश किया जाता है।**

**अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते।**

**ततो भूय ऽ इव ते तमो य ऽ उ विद्यायां रता।।।12।।**

**अन्वयः-ये मनुष्या अविद्यामुपासते तेऽन्धन्तमः प्रविशन्ति ये विद्यायां रतास्त उ ततो भूय इव तमः प्रविशन्ति।।12।।**

**भाषार्थ**-(ये) जो मनुष्य (अविद्याम्) अनित्य को नित्य, अपवित्र को पवित्र, दुःख को सुख, अनात्मा को आत्मा जानना रूप अविद्या है, अतः ज्ञानादि गुणों से रहित, कार्य-कारण रूप परमेश्वर से भिन्न जड़ वस्तु की (उपासते) उपासना करते हैं (ते) वे (अन्धम्) ज्ञान-दृष्टि को ढकने वाले (तमः) गाढ़ अज्ञान में (प्रविशन्ति) प्रविष्ट होते हैं। और-

(ये) जो अपने आपको पण्डित मानने वाले (विद्यायाम्) शब्द, अर्थ और सम्बन्ध के जानने मात्र तथा अवैदिक आचरण में (रताः) रमण करते हैं (ते) वे (उ) निश्चय ही (ततः) उससे (भूयः इव) कहीं अधिक (तमः) अज्ञान में प्रविष्ट होते हैं।।12।।

**भावार्थ**-यहां उपमांकार है। जो-जो ज्ञानादि गुणों से युक्त चेतन वस्तु है, वह ज्ञाता, और जो अविद्यारूप है वह ज्ञेय कहलाता है और जो चेतन ब्रह्म अथवा विद्वान् आत्मा है, उसी की उपासना और सेवा करनी चाहिए, और जो इससे भिन्न हैं, उसकी उपासना नहीं करनी चाहिए, किन्तु उससे उपकार ग्रहण करना चाहिए।

जो मनुष्य अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश इन पंच क्लेशों से युक्त हैं, वे परमेश्वर को छोड़कर इससे भिन्न जड़ वस्तु की उपासना करके महान् दुःख-सागर में डूबते हैं।

और जो शब्द, अर्थ, सम्बन्ध मात्र संस्कृत भाषा पढ़कर सत्य भाषण, पक्षपात रहित न्यायाचरण रूप धर्म का आचरण नहीं करते, अपितु अभिमानी होकर विद्या का अपमान करके अविद्या का नाम करते हैं, वे अत्यन्त अज्ञानरूप दुःखसागर में पड़े सदा दुःखी रहते हैं।।40/12।।

**भाष्यसार-**विद्या और अविद्या की उपासना का फल-जो अनित्य को नित्य, अपवित्र को पवित्र, दुःख को सुख, अनात्मा को आत्मा जानना रूप अवद्यि है, अतः ज्ञानादि गुणों से रहित, कार्य कारणात्मक, परमेश्वर से भिन्न वस्तु की जो उपासना करते हैं वे घोर अज्ञान को प्राप्त होते हैं। अपने आपको पण्डित मानने वाले, विद्या अर्थात् शब्द-अर्थ-सम्बन्ध के विज्ञानमात्र में तथा अवैदिक आचरण में रमण करते हैं, वे उससे भी कहीं अधिक अज्ञान को प्राप्त होते हैं।

तात्पर्य यह है कि चेतन आत्मा ज्ञानादि गुणों से युक्त ज्ञाता है। ज्ञानादि गुणों से रहित अविद्या रूप वस्तु ज्ञेय है। चेतन ब्रह्म उपासनीय है और विद्वानों का आत्मा सेवा करने योग्य है। विद्या अर्थात् चेतन ब्रह्म और आत्मा से भिन्न अर्थात् अविद्या (जड़) वस्तु उपासना के योग्य नहीं होती किन्तु उपकार लेने योग्य होती है।

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष अभिनिवेश पांच क्लेश हैं। इनसे युक्त मनुष्य परमेश्वर को छोड़कर उनसे भिन्न जड़ (अविद्या) वस्तु की उपासना करते हैं, वे महान् दुःखसागर में डूबते हैं। और जो शब्द-अर्थ-सम्बन्ध मात्र संस्कृत पढ़कर सत्यभाषण, पक्षपात रहित न्यायाचरण रूप धर्म का आचरण नहीं करते, अभिमानी होकर विद्या (चेतन ब्रह्म) का तिरस्कार करके अविद्या (जड़ पदार्थ) को ही अधिक मानते हैं, वे अधिक अन्धकार रूप दुःखसागर में सदा पीड़ित रहते हैं।।40/12।।

**मन्त्र संख्या 13**

**ऋषि दीर्घतमाः। देवता आत्मा=स्पष्टम्। छन्द अनुष्टुप्। स्वर गान्धारः।।**

**अब जड़-चेतन का विभाग कहते हैं।**

**अन्यदेवाहुर्विद्याया ऽ अन्यदाहुरविद्यायाः।**

**इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।13।।**

**अन्वयः-हे मनुष्याः! ये विद्वांसो नो विचचक्षिरे। विद्याया अन्यदाहुरविद्याया अन्यदेवाहुरिति, तेषां धीराणां तद्वचो वयं श्रुश्रुमेति विजानीत।।13।।**

**भाषार्थ**-हे मनुष्यो! जो विद्वान् लोग (नः) हमारे लिए (विचचक्षिरे) बतला गए हैं कि (विद्यायाः) पूर्वमन्त्र में कही विद्या का (अन्यत्) और ही कार्य वा फल होता है, ऐसा (आहुः) कहते हैं। (अविद्यायाः) पूर्वमन्त्र में प्रतिपादित अविद्या का (अन्यत्) और ही फल होता है, ऐसा उन (धीराणाम्) आत्मज्ञानी विद्वानों के पास से (तत्) उपदेश हमने (शुश्रुम) सुना है? ऐसा तुम जानो।।40/13।।

**भावार्थ-**ज्ञान आदि गुण से युक्त चेतन से जो उपयोग लिया जा सकता है, वह अज्ञानयुक्त जड़ वस्तु से नहीं। और जो जड़-वस्तु से प्रयोजन सिद्ध होता है, वह चेतन से नहीं हो सकता। ऐसा सब मनुष्यों को विद्वानों के संग, विज्ञान, योग और धर्माचरण से इन दोनों का विवेचन करके जड़ और चेतन दोनों का ठीक-ठीक उपयोग करना चाहिए।।

**भाष्यसार**-जड़ और चेतन का विभाग-विद्वान् मनुष्यों ने पूर्व मन्त्रोक्त विद्या (चेतनवस्तु) का अविद्या से अन्य (भिन्न) ही कार्य वा फल बतलाया है। पूर्व मन्त्रोक्त अविद्या (जड़वस्तु) का विद्या से अन्य (भिन्न) ही कार्य या फल बतलाया है। आत्मज्ञानी विद्वानों से विद्या और अविद्या से उत्पन्न फल तथा उनका स्वरूप हम भिन्न-भिन्न सुनते हैं।

तात्पर्य यह है कि विद्या अर्थात् ज्ञानादिगुणों से युक्त चेतन से जो उपयोग लिया जा सकता है, वह अविद्या अर्थात् अज्ञानयुक्त जड़ पदार्थ से नहीं। और जो अविद्या अर्थात् जड़ पदार्थ से प्रयोजन सिद्ध होता है, वह विद्या अर्थात् चेतन पदार्थ से नहीं। इसलिए सब मनुष्य विद्वानों के संग से विज्ञान, योग और धर्माचरण से विद्या और अविद्या का विवेचन करें तथा इनका यथावत् उपयोग करें।।40/13।।

**मन्त्र संख्या 14**

**ऋषि दीर्घतमाः। देवता आत्मा=स्पष्टम्। छन्द स्वराडुष्णिक्। स्वर ऋषभः।।**

**जड़ और चेतन के विभाग का फिर उपदेश किया है।**

**विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।**

**अविद्या मृत्यं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।।14।।**

**अन्वयः-यो विद्वान् विद्यां चाऽविद्यां च तदुभयं सह वेद सोऽविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।।14।।**

**भाषार्थ-(**यः) जो विद्वान् (विद्याम्) पूर्वमन्त्र में कही विद्या, (च) और उसके साधन उपसाधनों को तथा (अविद्याम्) पूर्व प्रतिपादित अविद्या (च) और उसके उपयोगी नाना साधनों (तत्, उभयम्, सह) उन दोनों को साथ-साथ (वेद) जानता है, (सः) वह (अविद्यया) शरीर आदि जड़ पदार्थों के द्वारा किये पुरुषार्थ से (मृत्युम्) प्राण-त्याग में होने वाले दुःख के भय को (तीर्त्वा) पार करके (विद्यया) आत्मा और शुद्ध-अन्तःकरण के संयोग रूप धर्म से उत्पन्न यथार्थ ज्ञान से (अमृतम्) अविनाशी आत्मस्वरूप को अथवा परमात्मा को (अश्नुते) प्राप्त करता है।।14।।

**भावार्थ-**जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को जानकर और इनके जड़ एवं चेतन पदार्थ साधक हैं, ऐसा निश्चय करके शरीर आदि जड़ और चेतन आत्मा का धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिए एक साथ प्रयोग करते हैं, वे लोग लौकिक दुःख से छूट कर पारमार्थिक सुख (मोक्ष) को प्राप्त होते हैं।

यदि जड़ (अविद्या) प्रकृति आदि कारणवस्तु अथवा शरीर आदि कार्यवस्तु न हो तो परमात्मा जगत् की उत्पत्ति तथा जीव कर्म, उपासना और ज्ञान की प्राप्ति कैसे कर सकते हैं।

इसलिए न केवल जड़ (अविद्या) के द्वारा और न केवल चेतन (विद्या) के द्वारा, अथवा न केवल कर्म (अविद्या) के द्वारा और न केवल ज्ञान (विद्या) के द्वारा कोई भी व्यक्ति धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि कर सकता है।।40/14।।

**भाष्यसार**-1. जड़ और चेतन का विभाग-जो विद्वान् पूर्व मन्त्रोक्त विद्या (चेतन वस्तु) और सत्सम्बन्धी साधन-उपसाधन तथा पूर्व में प्रतिपादित अविद्या (जड़ वस्तु) और उसके उपयोगी सब साधनों को साथ-साथ जानता है वह अविद्या अर्थात् शरीरादि जड़ पदार्थों से किये पुरुषार्थ के द्वारा मृत्यु के दुःख को पार कर सकता है, और विद्या अर्थात् आत्मा और अन्तःकरण के संयोग से उत्पन्न यथार्थ ज्ञान (दर्शन) से अमृत अर्थात् अविनाशी आत्मस्वरूप तथा परमात्मा को प्राप्त कर लेता है।

तात्पर्य यह है कि मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को समझें। जड़ और चेतन पदार्थ इनके साधक हैं, ऐसा निश्चय करें। शरीर आदि जड़ वस्तु (अविद्या), और चेतन आत्मा (विद्या) का धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिए साथ-साथ उपयोग करें। लौकिक दुःख (मृत्यु) को छोड़कर पारमार्थिक सुख (अमृत=मोक्ष) को प्राप्त करें।

2. जड़ और चेतन की आवश्यकता-यदि अविद्या अर्थात् जड़ प्रकृति आदि कारण वस्तुत अथवा शरीरादि कार्य वस्तु न हो तो परमेश्वर जगत् की उत्पत्ति नहीं कर सकता और जीव कर्म, उपासना और ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए न केवल जड़ (अविद्या) और न केवल चेतन (विद्या) अथवा न केवल कर्म (अविद्या) और न केवल ज्ञान (विद्या) से कोई भी मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि कर सकता है। अतः विद्या और अविद्या दोनों का सह-ज्ञान आवश्यक है।।40/14।।

**अन्यत्र व्याख्यात**--‘‘विद्यां चाविद्यां च0’’ (यजुर्वेद 40/14)।। जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को साथ ही जानता है, वह अविद्या अर्थात् कर्मोपासना से मृत्यु को तर के विद्या अर्थात् यथार्थ ज्ञान से मोक्ष को प्राप्त होता है। (सत्यार्थप्रकाश, नवम समुल्लास)

वेदों में ईश्वर, जीवात्मा और प्रकृति का दिया गया यथार्थ ज्ञान सभी मनुष्यों के लिए अति उपयोगी है। इन्हें जानकर और इसकायथायोग्य उपयोग व आचरण कर ही मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त कर कर सकता है। वेदों का निरन्तर स्वाध्याय करते रहना चाहिये जिससे मनुष्य अपने कर्तव्यों के प्रति सावधान रहे तथा जीवन के उद्देश्य को स्मरण रखते हुए उसकी पूर्ति में संलग्न रहे। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**